R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685
Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मूल्य-7 रुपये, वर्ष-22, अङ्क-12 दिसम्बर 2022

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

मङ्गलायतन

स्मृतिदिवस की झलकियाँ

मङ्गलायतन

③

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उ.प्र.) का

मासिक मुखपत्र

वर्ष-22, अङ्क-12 (वी.नि.सं. 2549; वि.सं. 2079) दिसम्बर 2022

उठो रे सुज्ञानी जीव....

उठो रे सुज्ञानी जीव, जिनगुण गाओ रे-3 ।टेक ॥

निशि तो नसाई गई भानु को उद्योत भयो-2
ध्यान को लगाओ प्यारे नींद को भगाओ रे ॥
उठो रे सुज्ञानी..... ॥1 ॥

भव वन चौरासी बीच, भ्रमे तो फिरत नीच-2
मोहजाल फन्द परयो, जन्म-मृत्यु पायो रे ॥
उठो रे सुज्ञानी..... ॥2 ॥

आरज पृथ्वी में आय, उत्तम जन्म पाये-2
श्रावक कुल को लहाये, मुक्ति क्यों न जाओ रे ॥
उठो रे सुज्ञानी..... ॥3 ॥

विषयनि राचि-राचि, बहुविधि पाप साचि-2
नरकनि जायके, अनेक दु:ख पायो रे ॥
उठो रे सुज्ञानी..... ॥4 ॥

पर को मिलाप त्यागि, आतम के जाप लागि-2
सुबुद्धि बताये गुरु, ज्ञान क्यों न लाओ रे ॥
उठो रे सुज्ञानी..... ॥5 ॥

साभार : मंगल भक्ति सुमन

संस्थापक सम्पादक
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

सम्पादक
डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन

सह सम्पादक
पण्डित सुधीर जैन शास्त्री, मङ्गलायतन

सम्पादक मण्डल
ब्रह्मचारी पण्डित ब्रजलाल शाह, वढ़वाण
बाल ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

सम्पादकीय सलाहकार
डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर
पण्डित विमलदादा झाँझरी, उज्जैन
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचन्द्र पी. वोरा, देवलाली
श्री वसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

मार्गदर्शन
डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, अलीगढ़

क्या - कहाँ

अध्यात्म-भावना 5
ज्ञान 12
श्री समयसार नाटक 16
आत्मा की सच्ची 21
श्रुत परम्परा एवं 24
कवि परिचय 26
प्रेरक प्रसंग 27
जिस प्रकार-उसी प्रकार 28
समाचार-दर्शन 29

शुल्क :
एक प्रति : 07.00 ₹
आजीवन (15 वर्ष) : 1000.00 ₹

परम शान्तिदायिनी

अध्यात्म-भावना

भगवान श्री पूज्यपादस्वामी रचित 'समाधिशतक' पर
परमपूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के
अध्यात्म भरपूर वैराग्य प्रेरक प्रवचनों का सार

[वीर संवत् २४८२, आषाढ़ शुक्ला ९, समाधिशतक, गाथा-५२]

आत्मा स्वयं ज्ञान-आनन्दमय है—ऐसा धर्मी जानते हैं और इसीलिए वे उसी में तत्पर रहते हैं—ऐसा कहा गया है। अब वहाँ प्रश्न करते हैं कि—हे नाथ! यदि आत्मा का स्वरूप ज्ञान-आनन्दमय है, तथा विषय दुःखरूप हैं तो उन इन्द्रिय-विषयों से विमुख होकर आत्मा का अनुभव करने में कष्ट जैसा क्यों लगता है? उसका समाधान करते हुए कहते हैं कि—

सुखमारब्धयोगस्य बहिर्दुःखमथाऽऽत्मनि।
बहिरेवाऽसुखं सौख्यमध्यात्मं भावितात्मनः ॥52॥

आत्मा में ही आनन्द है, वही उपादेय है, उसी में एकाग्र होना योग्य है—ऐसी रुचि और भावना तो है, तथा अभी उसमें एकाग्र होने का जो प्रयत्न करता है, उसे प्रारम्भ में कष्ट लगता है; क्योंकि अनादि से बाह्य विषयों का ही अभ्यास है, इसलिए उन बाह्य विषयों से पराङ्मुख होकर आत्मभावना में आते हुए कष्ट प्रतीत होता है। बाह्य विषय सरल हो गये हैं और अन्तर का चैतन्य विषय कठिन लगता है; क्योंकि कभी उसका अनुभव नहीं किया है। अन्तर में एकाग्र का प्रयत्न करनेवाला पूछता है कि—प्रभो! इसमें तो कष्ट प्रतीत होता है?—ऐसा पूछते हुए कष्ट कहकर वह छोड़ना नहीं चाहता किन्तु उग्र प्रयत्न द्वारा आत्मा का अनुभव करना चाहता है। आचार्यदेव कहते हैं कि—अरे भाई! प्रारम्भ में तुझे कष्ट जैसा लगेगा, किन्तु अन्तर प्रयत्न से आत्मा का अनुभव होने पर ऐसा अपूर्व आनन्द होगा कि उसके अतिरिक्त समस्त बाह्य विषय कष्टरूप-दुःखरूप भासित होंगे।

अनुभव का उद्यम करते-करते जहाँ निर्विकल्प आनन्द की अनुभूति हुई—सम्यग्दर्शन हुआ, वहाँ बारम्बार उसी की भावना करते हैं और उन्हें आत्मा में ही सुख भासित होता है; तथा बाह्य विषय दु:खरूप लगते हैं। जब आनन्द का अनुभव नहीं था, तब तो अन्तर के अनुभव का उद्यम करने में कष्ट मालूम होता था, और बाह्य में सुख भासित होता था, उन्हें आत्मा के आनन्द की रुचि (व्यवहार-विश्वास) तो है किन्तु अभी अनुभव नहीं हुआ है; इसलिए कष्ट जैसा लगता है; किन्तु जहाँ अन्तर में आनन्द का अनुभव हुआ—स्वाद आया, वहाँ बाह्य रस उड़ गया और चैतन्य के अनुभव में ही सुख है, वह जाना; इसलिए अब तो उन्हें आत्मा के ध्यान का उत्साह आया... ज्यों-ज्यों अधिक एकाग्रता करेंगे, त्यों-त्यों अधिक आनन्द और शान्ति का वेदन होगा।

जब तक आनन्द का स्वाद नहीं आया था, तब तक उसमें कष्ट लगता था, किन्तु अब जहाँ आनन्द का स्वाद आया, वहाँ धर्मी को उसमें से बाहर निकलना कष्टरूप-दु:खरूप लगता है। अज्ञानदशा में अनादि कालीन संस्कारों के कारण, विषय रुचिकर भासित होते थे, किन्तु जहाँ आत्मभावना में एकाग्र होकर उसके आनन्द का वेदन किया, वहाँ बाह्य समस्त विषयों की रुचि छूट गई, उन्हें चैतन्य के अनुभव से बाहर निकलकर परभाव में आना दु:खरूप लगता है और चैतन्यस्वरूप की भावना में—एकाग्रता में ही सुख का अनुभव होता है। चैतन्य का बारम्बार अभ्यास एवं भावना करते हुए वह सरल मालूम होता है... उसके आनन्द की समीपता होने से बाह्य विषयों की प्रीति छूट जाती है तथा आत्मा के आनन्द का वेदन होने से बाह्य विषयों के प्रति सुखबुद्धि छूट जाती है, संयोग और विकार की भावना नहीं रहती। जिस प्रकार मछली को शीतल जल रुचिकर-प्रिय है; उसमें से बाहर धूप में या अग्नि में आते हुए वह दु:ख से तड़फने लगती है; उसी प्रकार धर्मात्मा ज्ञानी को अपना शान्त-चैतन्य सरोवर ही सुखकर प्रतीत होता है; उसकी शान्ति के वेदन से बाहर निकलकर पुण्य या पाप के भाव में आना

पड़े, वह उन्हें दु:खरूप लगता है। जिसने आत्मा की अतीन्द्रिय शान्ति का कभी अवलोकन ही नहीं किया और बाह्य विषयों को ही देखा है, उसे आत्मानुभव का प्रयत्न प्रारम्भ में कष्टदायक प्रतीत होता है; किन्तु ज्यों-ज्यों उसका अभ्यास और भावना करता है, त्यों-त्यों उसमें उत्साह आता है। अभ्यास दशा में कुछ कष्ट मालूम होता है, किन्तु जहाँ पूर्ण प्रयत्न करके आत्मा के आनन्द का अनुभव करता है, वहाँ चैतन्य सुख के समक्ष उन्हें सम्पूर्ण जगत नीरस लगता है; समस्त विषय दु:खरूप भासित होते हैं। नरक में पड़े हुए किसी सम्यक्त्वी जीव को आत्मा के अतीन्द्रिय आनन्द के वेदन की जो शान्ति आती है, वैसी शान्ति मिथ्यादृष्टि को स्वर्ग के वैभव में भी नहीं होती। अरे! संयोग में शान्ति होती है या स्वभाव में? चैतन्य के शान्त जल से बाहर निकलकर इन्द्रिय -विषयों की ओर दौड़ता है, वही आकुलता है तथा अतीन्द्रिय चैतन्य में उपयोग स्थिर हो, उसमें परम अनाकुल शान्ति है। इसलिए भाई! आत्मा के आनन्द का विश्वास करके, बारम्बार दृढ़रूप से उसमें एकाग्रता का उद्यम कर।

जब तक आत्मा के आनन्द का स्वाद अनुभव में न आये, तभी तक बाह्य इन्द्रिय-विषयों में प्रीति-रुचि-उल्लास-सुख का अनुभव होता है और आत्मा का अनुभव कष्टदायक प्रतीत होता है; किन्तु जहाँ चैतन्य के आनन्द का वेदन हुआ, वहाँ आत्मा के आनन्द की ही प्रीति-रुचि-उल्लास एवं भावना होती है; फिर उसमें कष्ट का अनुभव नहीं होता; और विषय, सुखरूप नहीं किन्तु कष्टदायक प्रतीत होते हैं। जहाँ आनन्द एवं शान्ति का स्वाद आये, वहाँ कष्ट का अनुभव कैसे होगा? जिसने वह स्वाद नहीं लिया, उसी को कष्ट मालूम होता है।

जिस प्रकार जो मनुष्य हमेशा अपने घर के कुएँ का खारा और मैला पानी पीता हो; जिसने दूसरे गहरे कुएँ का स्वच्छ-मीठा जल कभी न चखा हो; उसे दूर के कुएँ तक जाकर स्वच्छ-मीठा जल पीना कष्टदायक प्रतीत होता है, किन्तु जहाँ एक बार उसने मीठे कुएँ के स्वच्छ जल का स्वाद लिया,

वहाँ तुरन्त खारे पानी का स्वाद उड़ गया.... और अब घर के आँगन में मिलनेवाला खारा पानी छोड़कर दूर के कुएँ का पानी लाने में उसे कष्ट का अनुभव नहीं होता। शीत-उष्ण ऋतु का लक्ष नहीं करता—उत्तम जल चखने के बाद गँदला जल नहीं रुचता—उसी प्रकार अज्ञानी जीव ने अनादि काल से सदा बाह्य इन्द्रिय-विषयों का खारा स्वाद लिया है, किन्तु आत्मा के अतीन्द्रिय-अनाकुल मीठे स्वाद का अनुभव नहीं किया; इसलिये उनके प्रयत्न में उसे कष्ट प्रतीत होता है; किन्तु जहाँ अन्तर्मुख चैतन्य-कूप में गहराई तक उतरकर विषयातीत आनन्द का स्वाद लिया, वहाँ उसके बारम्बार प्रयत्न में कष्ट मालूम नहीं होता; बल्कि उसे बाह्य विषय खारे-नीरस प्रतीत होने लगते हैं। इसलिए सदा आत्मा की ही भावना करनी चाहिये ॥२ ॥

❀ ❀ ❀

अब, आत्मा की भावना किस प्रकार करना चाहिए, सो कहते हैं:—

तद् ब्रूयात् तत्परान् पृच्छेत् तदिच्छेत् तत्परो भवेत्।
येनाऽविद्यामयं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत् ॥53 ॥

देखो, आत्मभावना की कितनी सुन्दर गाथा है !

जिसे आत्मा प्रिय है, उसे उसका कथन करना चाहिए, दूसरों के निकट उसकी चर्चा करना चाहिए, अन्य आत्मानुभवी पुरुषों-धर्मात्मा ज्ञानियों के निकट जाकर उस आत्मस्वरूप की पृच्छा करना चाहिए, उसी की अभिलाषा करना चाहिए तथा आत्मस्वरूप की प्राप्ति को ही अपना इष्ट बनाना चाहिए; उसी में तत्पर होना चाहिए, उस आत्मस्वरूप की भावना में सावधान होना चाहिए और उसका आदर बढ़ाना चाहिए।—इस प्रकार आत्मस्वरूप की भावना करने से अज्ञानमय बहिरात्मपना छूटकर, ज्ञानमय परमात्मस्वरूप की प्राप्ति होती है।

जिसे आत्मा का अनुभव करना है, उसे तो बारम्बार आत्मस्वरूप की ही भावना करनी चाहिए; उसी की कथा करनी चाहिए; सन्तों के निकट जाकर उसी के सम्बन्ध में पूछना चाहिए; उसी की इच्छा-भावना करनी

चाहिए तथा उसी में तत्पर-उत्साहित होना चाहिए। ज्ञान में—श्रद्धा में—उत्साह में—विचार में—सर्व में एक आत्मा को ही विषयरूप बनाना चाहिए... उसी का आदर करना चाहिए।—ऐसा करने से परिणति अन्यत्र से हटकर आत्मोन्मुख होती है।

'योगसार' में भी कहते हैं कि:—

(मन्दाक्रान्ता)

अध्येतव्यं स्तिमितमनसा ध्येयमाराधनीयं,
पृच्छयं श्रव्यं भवति विदुषाभ्यस्यमावर्जनीयं।
वेद्यं गद्यं किमपि तदिह प्रार्थनीयं विनेयं,
दृश्यं स्पृश्यं प्रभवति यतः सर्वदात्मस्थिरत्वं॥6-49॥

विद्वान पुरुषों को, अर्थात् आत्मार्थी मुमुक्षु जीवों को चैतन्यस्वरूप आत्मा निश्चयमन से—(1) पढ़ने योग्य है, (2) ध्यान करनेयोग्य है, (3)आराधना करनेयोग्य है, (4) पूछने योग्य है, (5) सुनने योग्य है, (6) अभ्यास करनेयोग्य है, (7) उपार्जन करनेयोग्य है, (8) जानने योग्य है, (9) कहने योग्य है, (10) प्रार्थना करनेयोग्य है, (11) शिक्षा-उपदेश योग्य है, (12) दर्शन योग्य है, (13) तथा स्पर्शन (अनुभवन) योग्य है। इस प्रकार तेरह बोलों से अर्थात् सर्वप्रकार से आत्मस्वरूप की भावना करनेयोग्य है—कि जिससे आत्मा सदैव स्थिरता को प्राप्त हो।

निर्जरा अधिकार में यह श्लोक रखकर ऐसा कहा है कि—ऐसे आत्मस्वरूप की भावना ही निर्जरा का उपाय है।

श्रवण में—पठन में—विचार में—भावना में—श्रद्धा में—ज्ञान में सर्वत्र अपने ज्ञानस्वरूप का ही आदर करना चाहिए। ऐसे सर्वप्रकार के आत्मस्वरूप के अनुभव का प्रयत्न करने पर अवश्य उसकी प्राप्ति होती है और अविद्या का नाश हो जाता है। यहाँ तो अभ्यास, श्रवण, तत्परता, आराधना, पढ़ना, पूछना, देखना, जानना इत्यादि अनेक बोल कहकर यह बतलाया है कि सच्चे जिज्ञासु को आत्मस्वरूप के अनुभव की कितनी तीव्र

लालसा एवं रुचि होती है। अन्य सब से विमुख हो-होकर वह सर्वप्रकार से एक चैतन्य की ही भावना का प्रयत्न करता है। जिस प्रकार—इकलौता पुत्र खो गया हो तो माता उसे किस-किस प्रकार से ढूँढ़ती है!! और कोई उसे पुत्र का पता बतलाये तो कितने उत्साहपूर्वक सुनती है!! उसी प्रकार जिज्ञासु को आत्मस्वरूप के निर्णय की ऐसी धुन लगी है कि बारम्बार उसी का श्रवण, उसी की पृच्छा, उसी की इच्छा, उसी में तत्परता तथा उसी का विचार करता है और जगत के विषयों का रस छूटता जाता है-विभावों से हटकर आत्मा के रस में वृद्धि होती जाती है।—ऐसे दृढ़ अभ्यास से ही आत्मा की प्राप्ति (अनुभव) होती है।

जिज्ञासु को आत्मा की कैसी लगन होती है—वह बतलाने के लिये यहाँ माता-पुत्र का दृष्टान्त दिया है। जिस प्रकार—किसी माता का इकलौता पुत्र खो जाने पर वह उसे किस प्रकार ढूँढ़ती है! जो मिलता है, उससे बात करती है तथा यही पूछती है कि—'कहीं मेरा पुत्र देखा है?' एक क्षण भी अपना पुत्र उसके चित्त से दूर नहीं होता; दिन-रात उसे पाने के लिये झूरती है.... उसी प्रकार जिसे आत्मस्वरूप की जिज्ञासा जागृत हुई है, वह आत्मार्थी जीव, सत्समागम से उसी की खोज करता है; उसकी बात पूछता है कि—'प्रभो! आत्मा का अनुभव कैसे होता है?' दिन-रात आत्मस्वरूप को प्राप्त करने की भावना वर्तती है, एक क्षण भी उसे नहीं भूलता... एक आत्मा की ही धुन-लगन लग रही है।

ऐसी लगनपूर्वक दृढ़ प्रयत्न करने से अवश्य ही आत्मा का अनुभव होता है। इसलिए वही करनेयोग्य है—ऐसा आचार्यदेव का उपदेश है।

❀ ❀ ❀

[वीर सं० 2482, अषाढ़ शुक्ला 10, मंगलवार]

आत्मा ज्ञानानन्दस्वरूप है—ऐसा जिसे भान हुआ है, उसकी वृत्ति बारम्बार उसी ओर जाती है; तथा जिसे आत्मानुभव की रुचि-उत्कण्ठा जागृत हुई है, वह भी बारम्बार उसी का प्रयत्न करता रहता है। 'रुचि

अनुयायी वीर्य'—अर्थात् जिसे आत्मा की रुचि जागृत हो, उसका प्रयत्न बारम्बार आत्मा की ओर ढलता रहता है।

जिसे शरीर में आत्मबुद्धि है, वह शरीर को अच्छा रखने के लिये रात-दिन उसी का प्रयत्न और चिन्ता करता रहता है; जिसे पुत्र का प्रेम है, वह माता, पुत्र के लिये दिन-रात कैसी विह्वल रहती है! खाने-पीने में कहीं चित्त नहीं लगता; मेरा पुत्र, मेरा पुत्र—ऐसी ममता की धुन में रहती है; उसी प्रकार जिसे चैतन्यस्वरूप आत्मा की सच्ची प्रीति है, वह उसे प्राप्त करने के लिये दिन-रात लालायित रहता है, अर्थात् बारम्बार उसी का प्रयत्न करता रहता है... उसे विषय-कषाय रुचिकर नहीं लगते... एक चैतन्य के अतिरिक्त कहीं चैन नहीं पड़ता; उसी की भावना भाता है... उसी की बात ज्ञानियों से पूछता है... उसी का विचार करता है। जिस प्रकार माता के वियोग में बालक झूरता है और उसे कहीं चैन नहीं पड़ता; कोई पूछे कि तेरा नाम क्या है ?—तो कहता है कि 'मेरी माँ!' कुछ खाने को दें तो कहेगा 'मेरी माँ!!'—इस प्रकार एक ही रटन लगाता है... माँ के बिना उसे कहीं चैन नहीं पड़ता क्योंकि माता की गोद ही उसे गाढ़ रुचिकर—प्रिय लगती है; उसी प्रकार आत्मार्थी जीव की रुचि एक आत्मा में ही लग रही है, इसलिए मुझे आत्मस्वरूप की प्राप्ति कैसे हो ?—इसके अतिरिक्त उसे कुछ भी नहीं सुहाता... दिन-रात उसी की चर्चा... वही विचार... उसी का रटन... उसी के लिये झूरना... ! (चिन्तन) देखो, ऐसी आन्तरिक लगनरूप भावना जागृत होने पर आत्मा की प्राप्ति होती है और जिसे एक बार आत्मा की प्राप्ति हुई-अनुभव हुआ, वह सम्यक्त्वी भी बारम्बार उसी के आनन्द की कथा—चर्चा—विचार—भावना करता है। आत्मा का आनन्द ऐसा... आत्मा की अनुभूति ऐसी... निर्विकल्पता ऐसी... इस प्रकार उसी की लगन लगी है। ज्ञान और आनन्द ही मेरा स्वरूप है—ऐसा जानकर एक उसी में लगन लगी है—उसी में उत्साह है, अन्यत्र कहीं उत्साह नहीं है। इस प्रकार ज्ञानानन्द-स्वरूप आत्मा की भावना से—दृढ़ प्रयत्न से—अज्ञान दूर होकर ज्ञानमय निजपद की प्राप्ति होती है ॥53॥ *साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -18, अंक-1*

.... गतांक से आगे

ज्ञान

[श्री समयसार-सर्व विशुद्धज्ञान अधिकार के प्रवचनों से]

सम्यग्दर्शन होने पर कैसे अभेद आत्मा का निर्विकल्प अनुभव होता है—उसका स्वरूप आचार्यदेव ने अलौकिक रीति से समझाया है। चेतयिता के अनुभव में किसी भेद का—विकल्प का अवलम्बन है ही नहीं। भेद के राग की दीवार बीच में रखकर आत्मा का अनुभव नहीं होता। भाई, तुझे अपने शुद्ध आत्मा को ध्येय करना हो और सम्यग्दर्शन-ज्ञान सिद्ध करना हो तो ज्ञान को अन्तर्मुख करना ही उसकी रीति है; परन्तु 'यह मेरा स्व और मैं उसका स्वामी'—इस प्रकार अकेले अपने में स्व-स्वामी अंश के भेद डालना उस भेदरूप व्यवहार द्वारा कुछ साध्य नहीं है। अहा, अन्तर का अन्तिम से अन्तिम जो सूक्ष्म व्यवहार... आचार्यदेव कहते हैं कि उस व्यवहार से भी कुछ भी साध्य नहीं है। भगवान आत्मा महान पदार्थ है, वह ऐसा नहीं है कि विकल्प द्वारा हाथ में आ जाये।

देखो, व्यवहार से पार ऐसा शुद्ध अनुभव चौथे गुणस्थान से प्रारम्भ हो जाता है; ऐसा अनुभव जिसने किया है, वह गृहस्थ भी मोक्षमार्गी है और ऐसे अनुभव रहित मोही साधु, वह मोक्षमार्गी नहीं है; यह बात समन्तभद्र महाराज ने रत्नकरण्ड श्रावकाचार में की है। अहा, मोक्षमार्ग अन्तर में कहाँ है, उसकी लोगों को खबर नहीं है, तो उसकी खबर बिना कार्य सिद्धि कहाँ से होगी ? स्वतत्त्व के वेदन में 'मैं अपना ही हूँ' ऐसे विकल्प की वृत्ति का उत्थान ही कहाँ है ? क्या तुझे विकल्प में से चैतन्यतत्त्व को साधना है ?

यह 'समयसार' की बात है। समयसार कौन है ? राग या विकल्प, वह कहीं समयसार नहीं है। विकल्परहित शुद्धात्मा की अनुभूति, वह समयसार है। पक्ष से अतिक्रान्त अर्थात् व्यवहार के विकल्पों से पार ऐसे आत्मा के स्वानुभवरूप जो परिणमित हुआ, वही समयसार है। सम्यग्दर्शन प्राप्त करने की प्रथम दशा ऐसी होती है। ऐसी दशा के बिना अन्य किसी प्रकार

सम्यग्दर्शन की सिद्धि नहीं होती। 'यही मार्ग है, दूसरा कोई मार्ग नहीं है'—ऐसा जब तक निर्णय न करे, तब तक वीर्य का वेग उस ओर नहीं बढ़ता। अहा, चैतन्यराजा! राग द्वारा उस राजा से भेंट नहीं होती। उस राजा से भेंट करने के लिये तो अन्तर्दृष्टि की अनोखी भेंट देना चाहिए।

अहा, ज्ञान-दर्शन-चारित्रस्वरूप आत्मा को पर से अत्यन्त निरपेक्षता है। जिसमें पर के सम्बन्ध की अपेक्षा नहीं है, राग के साथ भी जिसे सम्बन्ध नहीं है, ऐसे निरपेक्षज्ञान को एक बार लक्ष्य में ले तो जीव की बुद्धि शुद्ध द्रव्य में प्रविष्ट हो जाये; फिर उसे अपने में परद्रव्य का किंचित् आभास न हो अर्थात् अकेला ज्ञान, ज्ञानरूप से निजस्वरूप में ही परिणमित होता रहे। ज्ञानसामर्थ्य पर को जानती अवश्य है, परन्तु उससे कहीं ज्ञान पर का नहीं हो जाता या ज्ञान मलिन नहीं हो जाता। रागादि मलिन भावों को जानने से ज्ञान कहीं मलिन नहीं हो जाता, ज्ञान तो विशुद्ध ज्ञानरूप ही रहता है।

ज्ञानी कहते हैं कि—भाई, तू भगवान है... तेरा स्वभाव तेरे गुणों से परिपूर्ण है, वह कहीं बाहर से नहीं आता। जिस प्रकार आत्मा ज्ञान से परिपूर्ण है, उसी प्रकार वह पर के त्यागरूप स्वभाव से परिपूर्ण है। आत्मा का स्वभाव ही सर्व परद्रव्य के त्यागरूप है। परद्रव्य कहीं आत्मा में घुस नहीं गये हैं, उन्हें बाहर निकालना पड़े। अपोहक अर्थात् त्याग करनेवाला आत्मा, उसने पर का त्याग किया, ऐसा व्यवहार से कहा जाता है; वहाँ वास्तव में आत्मा कहीं पर का नहीं है। आत्मा पररूप होकर पर को नहीं छोड़ता, पर से तो पृथक् ही है और पृथक् ही था; परन्तु जहाँ ज्ञान-दर्शन में स्थिर हुआ और पर की ओर का राग नहीं रहा, वहाँ उसने परद्रव्य का त्याग किया, ऐसा कहा जाता है। जिस प्रकार ज्ञान है, वह परज्ञेय का नहीं है, ज्ञान ज्ञान ही है; उसी प्रकार त्यागभावरूप परिणमित अपोहक (आत्मा), वह त्याज्य ऐसे परद्रव्यों का नहीं है, अपोहक स्वयं अपोहक ही है। इस प्रकार ज्ञान-दर्शन-चारित्र के निर्मलभावरूप परिणमित आत्मा का स्वयं अपने में ही समावेश होता है, उसे परनिमित्तों के साथ सम्बन्ध नहीं है।

भाई, जगत के वाद-विवाद में कुछ नहीं मिलेगा; उसकी अपेक्षा तो अन्तर में चैतन्य के गुणों का मंथन कर तो तुझे कुछ प्राप्त होगा। तेरे निर्मल भाव तुझमें से ही प्रगट होते हैं और तुझमें ही समाते हैं। तेरे सम्यग्दर्शनादि कोई भाव पर में से नहीं आते और पर में नहीं जाते। बस, अन्तर्मुख हो।

ज्ञान-दर्शन से भरपूर जो आत्मस्वभाव; उस स्वभाव में राग या परद्रव्य कभी तन्मय हुए ही नहीं, तो फिर 'मैं उन्हें छोड़ूँ'—ऐसा स्वभाव में कहाँ रहा? जिस प्रकार सफेद चूने में कालेपन का अभाव ही है, तो वह कालेपन को क्या छोड़ेगा? वह तो कालेपन के अभावरूप स्वभाववाला ही है। उसी प्रकार चेतनेवाले आत्मा में अचेतन आदि परद्रव्यों का अभाव ही है तो वह चेतयिता उन परद्रव्यों को क्या छोड़ेगा? वह तो परद्रव्य के अभावरूप स्वभाववाला ही है। पर का त्याग करनेवाला कहना, वह तो व्यवहार से ही है, और आत्मा अपने निर्मल भावों को ग्रहण करता है, उसमें भी भेदरूप व्यवहार है। आत्मा अपने निर्मल भावों में तन्मय ही है; उनसे कहीं पृथक् नहीं है कि उन्हें ग्रहण करे। आत्मा स्वभाव से ही ज्ञान-दर्शन से भरपूर है और पर के त्यागरूप है—ऐसे स्वभाव को लक्ष्य में लेकर उसमें एकाग्र हुआ, वहाँ ग्रहण करनेयोग्य सब ग्रहण किया और छोड़नेयोग्य सब छोड़ दिया। जिस प्रकार चूना दीवाररूप नहीं है; उसी प्रकार ज्ञाताद्रव्य कहीं पररूप नहीं होता। पररूप नहीं होता अर्थात् पर को छोड़ता भी नहीं, क्योंकि अपने में जो है ही नहीं, उसे छोड़ना क्या?

तू चेतयिता... ज्ञान-दर्शन से भरपूर, क्या राग तेरे स्वभाव में है?—नहीं; स्वभाव में राग का अभाव है। तो जिसका अभाव है, उसे छोड़ना कैसे?

'राग का त्याग किया' अर्थात् क्या? कि जैसा स्वभाव है, वैसा जानकर उसमें जहाँ एकाग्र हुआ, वहाँ पर्याय में राग की उत्पत्ति नहीं हुई... पहले पर्याय में राग था और अब वह राग नहीं हुआ, उस अपेक्षा से 'राग का त्याग'

कहा है, परन्तु उस समय राग था और फिर छोड़ा–ऐसा उसका अर्थ नहीं है। स्वभाव में तो राग था ही नहीं। यदि स्वभाव में राग हो तो ज्ञान की भाँति राग के साथ भी आत्मा तन्मय हो जाये और राग कभी छूट नहीं सकेगा; अथवा राग को छोड़ने से ज्ञान भी छूट जायेगा। इसलिए ज्ञान तो ज्ञान ही है, ज्ञान में राग तन्मय है ही नहीं। ज्ञान, ज्ञान में तन्मय होकर परिणमित हुआ, उसी में राग का त्याग है।

जगत का अबाधित नियम है कि–कोई भी वस्तु अन्य वस्तुरूप से रूपान्तर नहीं हो जाती; प्रत्येक वस्तु सदैव निजस्वरूप में ही रहती है। कोई वस्तु निजस्वरूप को छोड़ती नहीं है और परस्वरूप होती नहीं है। आत्मा के ज्ञानस्वरूप में अन्य कोई प्रविष्ट हो जाये, ऐसा कभी नहीं होता। भाई, तेरे आत्मा में परद्रव्य प्रविष्ट नहीं हो गया है और तू कभी पररूप नहीं हुआ है; स्व और पर पृथक् के पृथक् ही हैं।

सिद्धदशा में राग का अभाव हुआ है न! यदि राग उस स्वभाव में होता तो उसका अभाव कहाँ से होता? स्वभाव का तो नाश होता ही नहीं है। जैसे—'ज्ञान' स्वभाव है, इसलिए उस ज्ञान का कभी नाश नहीं होता, उसी प्रकार राग यदि स्वभाव हो तो उसका कभी अभाव न हो। जिसका अभाव हो, वह स्वभाव नहीं है। इसलिए वर्तमान पर्याय में राग होने पर भी स्वभावदृष्टि से तो आत्मा राग के त्यागस्वरूप ही है। ऐसे स्वभाव की आराधना से ही पर्याय में राग का अभाव होता है। 'राग को छोड़ूँ'—यह पर्यायलक्ष्य से है; अखण्ड स्वभाव को लक्ष्य में लें तो 'राग है और उसे छोड़ूँ'—ऐसे प्रकार उसमें नहीं हैं। तथा ऐसे स्वभाव में एकाग्रता से ही पर्याय में राग के अभावरूप परिणमन हो जाता है। स्वभाव तो राग के अभावरूप है और पर्याय उसमें ढली, वहाँ वह राग के अभावरूप हो गई।—इसके अतिरिक्त अन्य रीति से राग का अभाव और बन्धन से छुटकारा नहीं होता।

क्रमशः

साभार : आत्मधर्म (हिन्दी), वर्ष -22, अंक-3-4

श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के धारावाही प्रवचन

द्वितीय अधिकार

प्रभु ! तेरी चीज़ विज्ञानघन है। इसलिए उसमें शरीर, कर्म, राग और भेद का प्रवेश नहीं है। अरे ! किन्तु यह बात इसको कैसे जँचे ? एक शुभभाव हो जाए, कुछ व्रतादि हो जाए वहाँ तो मैंने बहुत किया ऐसा लगता है; ऐसी स्थिति में यह विज्ञानघन की बात कैसे जँचे ? जो रंक होकर फिरता है, उसको राजापने की बात कैसे जँचे ? दो चार उपवास करे, वहाँ मैंने धर्म किया –ऐसा मानता है; परन्तु अज्ञानरूपी पीड़ा इसकी क्रिया को व्यर्थ कर देता है, उसका इसको भान नहीं है।

वर्ण, रस, गन्धादि गुण, शरीर, कर्म, दया, दानादि राग और गुणस्थानादि भेद विज्ञानघन चैतन्य से अन्य हैं और उनको चैतन्य की अपेक्षा भी नहीं है। विज्ञानघन चैतन्य की अपेक्षा बिना अकेले पुद्गल से हुए हैं। संसार का उदयभाव तो पुद्गल है। भाई ! वह तेरी चीज़ नहीं है। जिस भाव से बन्धन होता है, वह भाव जीवस्वभाव कैसे हो सकता है ? जीवभाव से बन्धन नहीं होता। जीव के त्रिकाल स्वभाव की अपेक्षा बिना निरपेक्षरूप से होनेवाले समस्त भाव स्वयं ही पुद्गल हैं।

अहो ! अपना विज्ञानघन स्वभाव ऐसा है। जीव उससे दूर-दूर भागकर आत्मा को प्राप्त करना चाहता है; परन्तु इस प्रकार से आत्मा प्राप्त नहीं होता है। जहाँ आत्मा है ही नहीं, वहाँ से कैसे प्राप्त होगा ? जिसको आत्मा कैसा है ? यह भी पता नहीं है, वह आत्मा को कैसे खोजेगा ?

यह अजीव अधिकार है। इसलिए अजीव और अजीव के लक्ष्य से हुए भाव ये सब अजीव हैं ऐसा सिद्ध किया है। सम्प्रदायवालों को वीतरागमार्ग का पता नहीं है और वीतराग को पेड़ी (दुकान) लगाकर बैठते हैं; क्योंकि बड़े के नाम बिना हुण्डी नहीं चलती है।

जो विज्ञान का घन है, उसमें सब जीव स्वरूप है और जो भेदरूप है, वह

सब पुद्गलस्वरूप है। भगवान आत्मा ज्ञान का रसकन्द है। गुणस्थान भेद, राग, दया, दान, व्यवहाररत्नत्रय आदि भाव विज्ञानघन से भिन्न हैं, इसलिए वे सम्यग्दर्शन का विषय नहीं है। जैसे 'घी' का घड़ा कहा जाता है; परन्तु घड़ा तो मिट्टी का है; उसी प्रकार व्यवहाररत्नत्रय के भावों को जीव का कहा जाता है; परन्तु ये जीव के नहीं है।

समयसार की एक भी पंक्ति अथवा एक भी गाथा समझना बहुत सूक्ष्म है। इसमें तो तुझे याद किया है। कोई ऐसा कहता है कि हमने तो (समयसार को) मात्र पन्द्रह दिनों में पढ़ लिया; वह मात्र शब्द पढ़ गया है, भाव नहीं समझा है। एक-एक पंक्ति में कितने भाव भरे हैं। उसको मैंने संक्षेप में समझ लिया है, यह बात झूठ है। संक्षेप में समझना उसको कहते हैं कि मैं अभेद वस्तु हूँ और शरीर, कर्म, राग, भेदादि मुझसे भिन्न हैं, इतना अन्दर से समझ जाये। इतना भी समझे बिना मुझे संक्षेप से समझ में आता है, यह मानना ठीक नहीं है। 80 के साल में (विक्रम संवत् 1980 में) यह संक्षेपरुचि की चर्चा हुई थी। लोगों को पाँच-छह महीने तक व्याख्यान सुनकर लगा कि यह तो कोई दूसरी बात करते हैं। तब यह नहीं माननेवाले -सुननेवाले एक भाई ऐसा कहते थे कि 'देखो, भाई! यह सम्प्रदाय मिला है इसकी श्रद्धा करना, यह सम्यग्दर्शन है। अब व्रत, तपादि लेनेरूप चारित्र है, वह अभी अपने को नहीं है, अपने को तो संक्षेप रुचि है'...अरे! क्या हो? संक्षेप रुचि किसको कहते हैं -इसका भी पता नहीं है। अतः ऐसा बोलते हैं। अज्ञान का स्वरूप ही ऐसा है, इसमें व्यक्ति का दोष नहीं है। मृग की तरह संकल्प-विकल्प में दौड़-दौड़ा करते हैं।

दौड़त दौड़त दौड़ियो जेती मन की दौड़।
प्रेम प्रतीत विचारो टुकड़ीपण गुरुगम लेजो रे जोड़॥

गुरु तुझको अन्तर में चैतन्य बताते हैं, वह तू है। क्रिया की दौड़ में दौड़कर सूख जाये, तो भी क्रिया से आत्मा मिले -ऐसा नहीं है। सब विकल्प भी पुद्गल हैं, उनसे भी चैतन्य की प्राप्ति नहीं होती है।

'वस्तु विचारत कर्म सौं भिन्न एक चिद्रूप' शब्द तो एक 'कर्म' डाला है; परन्तु कर्म में राग, शरीर और भेदादि सब आ जाता है। भगवान आत्मा तो एकरूप चैतन्यरस विज्ञानघन है। उसे ही त्रिलोकनाथ (भगवान सर्वज्ञदेव) आत्मा कहते हैं। ऐसे विज्ञानघन की दृष्टि होने पर सम्यग्दर्शन होता है। इसके अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से तीन काल में सम्यग्दर्शन नहीं होता है और सम्यग्दर्शन के बिना व्रत और तप तो मूर्खतापूर्ण बालव्रत और बालतप हैं।

'निर्माण मेंकस्य हि पुद्गलस्य –ऐसा कहकर एक पुद्गल से ही हुआ, यह कार्य है –यह कहना है। उसमें जीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल इन पाँच में से किसी की अपेक्षा नहीं है। 'एकस्य हि' कहकर जोर बताया है। संसार की दशा, यह पुद्गल की दशा है, जीव की दशा नहीं। एकरूप विज्ञानघन ही सत्य जीव है, अन्य सब विकल्प और भेद एक पुद्गल ही है। भगवान की भक्ति और देव–शास्त्र–गुरु की श्रद्धा का राग भी इसमें (पुद्गल में) आ जाता है। 'विज्ञानघन–स्ततो–दन्य' कहकर विज्ञानघन आत्मा से अन्य जो कुछ है, वह पुद्गल है।

पुद्गल के निमित्त से जीव अनेक रूप धारण करता है –पर्याय में अनेक रूप धारता है; परन्तु वस्तुस्वरूप का विचार करो तो वह कर्म से अत्यन्त भिन्न एक चैतन्यमूर्ति है। परन्तु (जीव) वस्तु का विचार नहीं करता और पुद्गल को अपना मानकर बैठा है, इससे दु:खी होता है। जैसे बड़ के वृक्ष पर बैठा हुआ बन्दर, बड़ को अपना मानता है, इस कारण बड़ से खिरकर गिरनेवाले एक–एक पत्ते को देखकर दु:खी होता है, उसको लगता है कि मानो मेरा कुछ कम होता है। उसी प्रकार अज्ञानी को थोड़ा धन जाने पर दु:ख होता है, रोग आने पर दु:ख होता है। इस प्रकार उसको पुद्गल में अनेक प्रकार से एकत्व मानने के कारण दु:ख होता है।

एक दृष्टान्त भी आता है कि बन्दर की परछाई नीचे पड़ती थी, उस पर सिंह ने आकर झपट्टा मारा, वहाँ बन्दर को ऐसा लगा कि सिंह ने मुझे पकड़ा है। इस कारण वह घबड़ाकर नीचे गिर गया। उसी प्रकार शरीर, मन, वाणी

तो परछाई के समान हैं, उनको अपना माननेवाला मूर्ख संसाररूपी सिंह के मुख में पड़ता है।

भगवान ! तेरे में भेद भी नहीं है; अब तुझे किसको रोना है ? किस वस्तु के जाने पर क्लेश करना है ?

भावार्थ यह है कि अनन्त संसार में संसरण करता जीव नर, नारकादि जो अनेक पर्यायें प्राप्त करता है, वे सब पुद्गलमय हैं। चारों ही गतियों में जो कोई शरीर धारण करता है, वे सब पुद्गल हैं। यह स्त्री है और यह पुरुष है, ये सब तो जड़ के भेद हैं, आत्मा के भेद नहीं; तथापि शरीर के जीर्ण होने पर मैं जीर्ण हो गया, ऐसा मानकर दु:खी होता है। यह सब अवस्था तो पुद्गल है और कर्मजनित है; कर्म के निमित्त से हुआ उपाधिभाव है। यदि वस्तुस्वरूप का विचार किया जाये तो यह जीव की दशा नहीं है। जीव तो शुद्ध, बुद्ध, निर्विकार, देहातीत और चैतन्यमूर्ति है। कब ? अभी ही जीव तो शुद्ध, बुद्ध, देहातीत निर्विकार चैतन्यमूर्ति है; परन्तु इसने कभी विचार करने का अवसर ही नहीं लिया। संसार के भ्रमजाल में पड़ा है। वहाँ से छूटता है तो व्रत, तपादि करके साधु हो जाता है; परन्तु यह तो उल माथी चूल मा पड्यो ...अपने विज्ञान स्वरूप को लक्ष्य में नहीं लिया, इसलिए कहते हैं कि अब उसके लिए अवसर ले (समय निकाल) ! वस्तुस्वरूप के भान बिना सम्यग्दर्शन नहीं होगा और सम्यग्दर्शन के बिना धर्म का प्रारम्भ ही नहीं होता है।

अब आठवें कलश के नौवें पद में जीव की भिन्नता का दूसरा दृष्टान्त देते हैं–

देह और जीव की भिन्नता पर दूसरा दृष्टान्त

ज्यौं घट कहिये घीवकौ, घटकौ रूप न घीव।
त्यौं वरनादिक नामसौं, जड़ता लहै न जीव॥9॥

अर्थ:– जिस प्रकार घी के संयोग से मिट्टी के घड़े को घी का घड़ा कहते हैं परन्तु घड़ा घी रूप नहीं हो जाता, उसी प्रकार शरीर के सम्बन्ध से जीव छोटा, बड़ा, काला, गोरा आदि अनेक नाम पाता है परन्तु वह शरीर के समान अचेतन नहीं हो जाता।

भावार्थः– शरीर अचेतन है और जीव का उसके साथ अनन्त काल से सम्बन्ध है तो भी जीव शरीर के सम्बन्ध से कभी अचेतन नहीं होता, सदा चेतन ही रहता है ॥9 ॥

काव्य – 9 पर प्रवचन

जैसे मिट्टी के घड़े में घी भरा हो तो उसको घी का घड़ा कहा जाता है; परन्तु वह घड़ा घी का बना हुआ नहीं है। घड़ा तो मिट्टी का ही है। घड़ा घी रूप हो नहीं जाता, मिट्टी रूप ही रहता है। उसी प्रकार शरीर के सम्बन्ध से जीव छोटा, बड़ा, काला, सफेद इत्यादि अनेक नाम पाता है; परन्तु वह शरीर की तरह अजीव नहीं हो जाता। जीव को रागी, द्वेषी, मोही कहा जाता है; पुण्यवन्त अथवा पापी कहा जाता है; पूर्व में बोया है, वह काटता है– ऐसा भी कहा जाता है; परन्तु भगवान आत्मा रागी–द्वेषी–मोही पुण्यवन्त अथवा पापी नहीं हो जाता। पुण्य–पाप के भाव विकाररूप होकर रहते हैं, वे जीव के नहीं हो जाते है। जैसे जड़, जड़ होकर रहा है, उसी प्रकार विकार, विकार का होकर रहा है, जीव विकारी नहीं हो जाता है।

जैसे, बन्दर पहले बोर की मुट्ठी भरकर फिर कहता है कि मेरा हाथ घड़े में से नहीं निकलता; परन्तु निकले कैसे ? मुट्ठी छोड़ दे तो तू छूटा हुआ ही है। उसी प्रकार स्वयं शरीर, वाणी, मन और पुण्य–पाप ये मेरे हैं –ऐसा मानकर बैठा है। इनको मान्यता में से (दृष्टि में से) छोड़ दे तो तू छूटा हुआ ही है। पुत्र पिता का नहीं है और पिता पुत्र का नहीं है। इसका यह पुत्र 'घी के घड़े' की तरह कहा जाता है; परन्तु आत्मा राग का पिता भी नहीं है, तो पुत्र का पिता तो कैसे हो ? यदि पुद्गल का स्वामी जीव हो, तब तो जीव जड़ हो जाए।

क्रमशः

मन्दिर–वेदी प्रतिष्ठाओं की, पंचकल्याणकों की एवं अन्य मांगलिक कार्यों के शुभ मुहूर्त हेतु **ज्योतिर्विद पण्डित प्रकाशचन्दजी जैन, मैनपुरी के सहयोगी डॉ. अनुजकुमार जैन, अलीगंज, मोबा. 9837713598** पर भी सम्पर्क कर सकते हैं।

[वांकानेर में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-महोत्सव के समय
परम पूज्य गुरुदेव का प्रवचन : वीर सं. २४८० चैत्र शुक्ल ९]

आत्मा की सच्ची शान्ति कैसे हो ?

शिष्य पूछता है कि प्रभो! आत्मा की शान्ति कैसे प्राप्त हो? उसका उपाय क्या है? अनादिकाल से संसार की चार गतियों में भटकते हुए कहीं भी सच्ची शान्ति नहीं मिली। नरक में और स्वर्ग में, तिर्यंच में और मनुष्य में अनादिकाल से अवतार धारण किये और उनके कारणरूप पाप तथा पुण्यभाव भी अनन्त बार किये हैं; किन्तु उनमें कहीं आत्मा की शान्ति प्राप्त नहीं हुई। अब आत्मा की शान्ति की जिज्ञासा से शिष्य पूछता है कि प्रभो! ऐसा कौन सा उपाय है कि जिससे मुझे अपने आत्मा का भान हो?—ऐसा पूछनेवाले को आत्मा की आस्था है, जिनसे पूछ रहा है ऐसे ज्ञानी गुरु की आस्था भी उसे हुई है और आत्मा का स्वरूप समझने की जिज्ञासा हुई है।

—ऐसे शिष्य को आचार्यदेव समझाते हैं कि हे भाई! जो देहादि का संयोग और अवस्था का क्षणिक विकार दिखाई देता है, वह तेरे आत्मा के स्वभाव के साथ एकमेक नहीं है। क्षणिक संयोग और विकार की दृष्टि छोड़कर आत्मा के भूतार्थस्वभाव की दृष्टि से देखने पर भगवान आत्मा, कर्म से बँधा हुआ नहीं है और विकार भी उसके साथ एकमेक नहीं हुआ है। ऐसे भूतार्थस्वभाव की दृष्टि से आत्मा शुद्धस्वभावरूप अनुभव में आता है और उत्सव उसमें अतीन्द्रिय शान्ति का अनुभव होता है;—यह सम्यग्दर्शन की रीति है।

लक्ष्मी आदि का राग कम करके धर्म प्रभावना के लिये प्रतिष्ठा-महोत्सवादि कार्यों में लक्ष्मी व्यय करने का शुभभाव धर्मी को भी आता है; तथापि उस समय भी धर्मी जानता है कि यह राग तो संयोग के लक्ष्य से होता है और मेरा स्वभाव असंयुक्त है। हे भाई! यदि तुझे अनन्त काल की भूख

मिटाना हो और धर्म का प्रारम्भ करना हो, अपूर्व आत्मशान्ति की आवश्यकता हो तो अन्तर में शुद्ध ज्ञानानन्दस्वभाव का अवलम्बन कर। इन्द्रों को भी देव-गुरु-धर्म के प्रति भक्ति का आह्लाद आता है।

भगवान का जन्म होने पर इन्द्रों के आसन कम्पायमान होते हैं और वे भगवान के सामने आकर भक्ति से नाचने लगते हैं। तीर्थंकर का जन्म होने के पन्द्रह महीने पहले से इन्द्र आकर भगवान के माता-पिता की सेवा करते हैं और कुबेर रत्नों की वर्षा करता है। इन्द्र, माता के पास आकर कहते हैं कि हे देवी! छह महीने बाद आपकी कुक्षि में त्रिलोकीनाथ तीर्थंकर का आत्मा आनेवाला है। हे माता! आप भगवान की ही नहीं किन्तु तीन लोक की माता हैं! हे रत्नकुक्षिधारिणी माता! आप त्रिलोकीनाथ तीर्थंकर की जन्मदात्री हैं।

— ऐसा भक्ति का भाव आये, तथापि उस समय राग से पार चिदानन्द-स्वभाव पर धर्मी की दृष्टि पड़ी है। चिदानन्दस्वरूप आत्मा को प्राप्त करना चाहिए, उसकी यह बात है। भगवान आत्मा स्वयं कल्याण की मूर्ति है; राग के अवलम्बन से या बाह्य साधन से आत्मा का कल्याण नहीं होता। यह अपूर्व बात समझने से ही जीव का कल्याण होता है; इसलिए आत्मा की सच्ची समझ करना ही विश्रामस्थल है। भाई! प्रथम आत्मा की समझ का उपाय कर। दया, भक्ति आदि का रागभाव बीच में होता है, किन्तु वह कहीं शान्ति का उपाय नहीं है। राग और संयोग से पार वास्तविक चैतन्यस्वरूप क्या है, उसकी समझ करना ही शान्ति का मार्ग है।

भाई! तेरे आत्मा में तेरी प्रभुत्वशक्ति भरी है; तेरी प्रभुता तुझमें ही विद्यमान है; उसके सन्मुख होकर प्रतीति करना, वह प्रभुता का उपाय है। ज्ञानी तो विधि बतलाते हैं किन्तु उस विधि को समझकर उसका प्रयोग तो स्वयं ही करना पड़ता है। अन्तर में स्वभावसन्मुख होकर स्वयं प्रयोग करे तो यथार्थ श्रद्धा-ज्ञान हो। अज्ञानी, विकार की और संयोग की शक्ति तो देखते हैं किन्तु विकार से पार ध्रुव ज्ञानानन्दस्वभाव ज्यों का त्यों विद्यमान है,

उसकी शक्ति और महिमा वे नहीं देखते। विकार तो प्रतिक्षण बदलता रहता है और ज्ञानानन्दस्वभाव ज्यों का त्यों ध्रुव एकरूप रहता है। ऐसे स्वभाव के सन्मुख होकर उसमें एकाग्रता करना, वह अपूर्व धर्म की रीति है। यह बात किसे समझाई जा रही है ?

—जिसमें समझने की शक्ति हो, उसे यह बात समझाते हैं। ज्ञानी सन्त जानते हैं कि जीवों में यह बात समझने की शक्ति है, जीव यह बात समझ सकेंगे;—ऐसा जानकर वे ऐसा उपदेश देते हैं। ''मैं समझने योग्य हूँ''—ऐसा लक्ष्य करके जिज्ञासापूर्वक प्रयत्न करे तो वह बात अवश्य ही समझ में आ सकती है। यह कहीं जड़ से नहीं कहते, कीड़ों-मकोड़ों को नहीं सुनाने, किन्तु जिनमें समझने की शक्ति है और समझने की जिज्ञासा से आये हैं, उन्हीं से यह बात कही जा रही है।

हे भाई! तेरा आत्मा शुद्ध ज्ञानान्दस्वरूप है। शरीरादिक तो जड़-अजीवतत्त्व हैं; जो शुभाशुभभाव होते हैं, वे आस्रव और बन्धतत्त्व हैं; वह जीव का स्वरूप नहीं है। ज्ञानपर्याय अन्तरोन्मुख होकर अभेद होने से जो निर्मलदशा हुई, वह संवर-निर्जरा-मोक्षतत्त्व है; वह निर्मलदशा आत्मा से पृथक् नहीं है किन्तु उसी के साथ अभेद है, इसलिए वह आत्मा ही है। अन्तर्स्वभावोन्मुख होने से निर्मलपर्याय आत्मा के साथ अभेद होती है। भूतार्थस्वभाव की दृष्टि से देखने पर नवों तत्त्वों में एक शुद्ध आत्मा ही प्रकाशमान है।

जड़ से और पुण्य-पाप से पार तथा जो निर्मल पर्याय प्रगट हुई, उसमें अभेद शुद्ध आत्मा है; ऐसे शुद्ध आत्मा की दृष्टि प्रगट हुई, वहाँ धर्मी को एक शुद्ध आत्मा की ही मुख्यता है; जो स्व-परप्रकाशकज्ञान विकसित हुआ उसमें संयोग को और राग को जानते हैं, किन्तु शुद्ध आत्मा की मुख्यता धर्मी की दृष्टि में से कभी नहीं हटती। अवस्था में विकार होने पर भी, ऐसे शुद्ध आत्मा की दृष्टि किस प्रकार होती है, यह बात आचार्यदेव विशेषरूप से दृष्टान्त देकर आगे समझायेंगे।●●

गतांक से आगे

श्रुत परम्परा एवं श्रुतज्ञान का स्वरूप

आचार्य ब्रह्मदेव कहते हैं—

अथ स्वशुद्धात्मनि शोभनमध्यायोऽभ्यासो निश्चयस्वाध्यायः।

अर्थात् स्वशुद्धात्मा में जो उत्तम अध्याय/अभ्यास, वह निश्चय स्वाध्याय है। **(वृहद् द्रव्यसंग्रह टीका, पृष्ठ 248)**

आचार्य पूज्यपादस्वामी कहते हैं—

ज्ञानभावनालस्यत्यागः स्वाध्यायः।

अर्थात् आलस्य का त्याग कर ज्ञान की आराधना करना, स्वाध्याय तप है। **(सर्वार्थसिद्धि, 9/20, पृष्ठ 336)**

चामुण्डरायजी कहते हैं—

'स्वस्मै हितोऽध्यायः स्वाध्यायः'

अर्थात् अपने आत्मा का हित करनेवाला अध्ययन करना स्वाध्याय है। **(चारित्रसार 152/5, पृष्ठ 67)**

माणिकचन्दजी कहते हैं—

सम्यग्ज्ञान की भावना में आलस्य न करना, उसमें वीतराग स्वरूप के लक्ष्य के द्वारा अन्तरंग परिणामों की जो शुद्धता होती है, वह सम्यक् स्वाध्याय है। **(मोक्षशास्त्र, पृष्ठ 590)**

इस प्रकार यह स्वाध्याय का निश्चयपरक कथन हुआ।

अब व्यवहारपरक कथन करते हैं—

आचार्य वट्टकेरस्वामी कहते हैं—

बारसंगे जिणक्खादं सज्झायं कथितं बुधैः।

अर्थात् जिनेन्द्रदेव द्वारा व्याख्यात द्वादशांग को विद्वानों ने स्वाध्याय कहा है। **(मूलाचार, गाथा 511, पृष्ठ 388)**

आचार्य जिनसेन कहते हैं—

बाह्याभ्यन्तरभेदेन द्विविधेऽपि तपोविधौ।
अज्ञान प्रतिपक्षत्वात् स्वाध्यायः परमं तपः॥

अर्थात् बाह्य और आभ्यन्तर के भेद से तप दो प्रकार का कहा गया है।

उन दोनों प्रकार के तपों में अज्ञान विरोधी होने से स्वाध्याय परम तप कहा गया है। (हरिवंशपुराण 1/69, पृष्ठ 7)

पुन: आचार्य वट्टकेरस्वामी कहते हैं—

णाणविण्णाणसंपण्णो झाणज्झणतवेजुदो।
कसायगारवुम्मुक्को संसारं तरदे लहुं॥
सज्झायं कुव्वंतो पंचिदियसंपुडो तिगुत्तो य।
हवदि य एयग्गमणो विणएण समाहिओ भिक्खू॥

(मूलाचार, गाथा 970-971)

अर्थात् ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न एवं ध्यान, अध्ययन और तप से युक्त तथा कषाय और गौरव से रहित मुनि शीघ्र ही संसार को पार कर लेते हैं।

विनय से सहित मुनि स्वाध्याय करते हुए पंचेन्द्रियों को संकुचित कर तीन गुप्ति युक्त एकाग्रमना हो जाते हैं।

आचार्य वसुनन्दि इसी की आचारवृत्ति में कहते हैं—

दर्शन, विनय आदि विनयों से संयुक्त मुनि उत्तम शास्त्रों का अभ्यास और वाचना आदि करते हुए पंचेन्द्रियों को संवृत कर लेते हैं एवं तीन गुप्ति सहित हो जाते हैं तथा एकाग्रचित्त होकर ध्यान में तत्पर हो जाते हैं, इसलिए स्वाध्याय नाम का चारित्र प्रधान है, क्योंकि उससे वे मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। अर्थात् विनय पूर्वक स्वाध्याय करते समय इन्द्रियों का और मन, वचन, काय का व्यापार रुक जाता है, अन्यत्र नहीं जाता है, उसी में तन्मय हो जाता है। अत: 'एकाग्रचिन्ता निरोधरूप' ध्यान का लक्षण घटित होने से यह स्वाध्याय मुक्ति का कारण है।

पुन: आचार्य वट्टकेरस्वामी कहते हैं—

बारसविधह्मि य तवे सब्भंतरबाहिरे कुसलदिट्ठे।
ण वि अत्थि ण वि य होहदि सज्झायसमं तवोकम्मं॥

अर्थात् गणधर देवादि प्रदर्शित, बाह्य अन्तरंग से सहित बारह प्रकार के तपों में स्वाध्याय समान तप कर्म न है और न ही होगा। (मूलाचार, गाथा 972)

क्रमश:

कवि परिचय

महाकवि विल्हण / कल्हण

कश्मीर के महाकवि विल्हण ने, विक्रमादित्य षष्ठ त्रिभुवन मल्ल साहसतुंग (1073-1128 ई.) के आश्रय में 'विक्रमांकदेवचरित' शीर्षक महाकाव्य की रचना की थी। उक्त नरेश बड़ा प्रतापी व विद्यारसिक था। अनेक विद्वानों को उसने आश्रय दिया था। कुछ लेखकों के मतानुसार जैनाचार्य वासवचन्द्र को बाल-सरस्वती की उपाधि इसी चालुक्य नरेश ने प्रदान की थी। उसने वनवासी प्रान्त की राजधानी बल्लिगांव (बादामी) में नेमि जिनालय नाम का एक सुन्दर मन्दिर बनवाया था।

गुलबर्गा जिले के हुनसि—हल्दे नामक स्थान में स्थित पद्मावती पार्श्वनाथ जिनालय के शिलालेख से प्रतीत होता है कि वह जिन मन्दिर भी इसी सम्राट द्वारा बनवाया गया था। उसने अनेक जिनमन्दिरों का निर्माण व अनेकों का जीर्णोद्धार कराया था। आचार्य अर्हद्नन्दि इसी नरेश के धर्मगुरु थे। यद्यपि वह जैन था फिर भी सर्वधर्म सहिष्णु था। स्थापत्य शिल्प की चालुक्य शैली के विकास का श्रेय भी इन्हीं नरेश को है। अभिलाष-चिन्तामणि अपरनाम 'राजमानसोल्लास' नामक महाग्रन्थ की रचना सोमेश्वर तृतीय भूलोक मल्ल (उपाधि) (1128-39 ई.) ने की थी। वह एक प्रकार का विश्वकोश जैसा था और सौ अध्यायवाला एक विशाल था। वह सम्राट विक्रमादित्य षष्ठ की ज्येष्ठ रानी जक्कलदेवी का पुत्र था। जक्कलदेवी इंगलांगे प्रान्त की शासिका थी। अपने कुशल प्रशासन एवं वीरतापूर्ण कार्यों के लिए उसने बड़ी ख्याति अर्जित की थी। वह कलिकाल पार्वती तथा अभिनव-सरस्वती कहलाती थीं और जैनधर्म की अनुयायी थीं।

विल्हण जैसे प्रतिभाशाली कवि का उत्तर से चलकर ठेठ दक्षिण में आकर राज्याश्रय ग्रहण करना कई राजनैतिक संकेत देता है। जैनाचार्य वासवचन्द्र, मुनि रामसेन पण्डित, आचार्य अर्हद्नन्दि आदि भी इसी समय जैन आचार-विचार की पताका दक्षिण भारत में फहरा रहे थे।

प्रेरक प्रसंग

महामूर्ख और महाविद्वान

संसार-प्रसिद्ध कथा-लेखक तुर्गनैव के पास मिलने वालों का ताँता लगा रहता था। जो आते थे, वे सब साहित्यिक ही होते थे, ऐसी बात नहीं। कोई प्रशंसा करनेवाले आते थे तो कोई कहानी-कथा पर समीक्षा की दृष्टि से दो चार बातें करने भी आते थे। पर एक दिन अजीब आदमी ने तुर्गनैव का दरवाजा खड़खड़ाया।

मुझे सब लोग मूर्ख ही नहीं कहते, आगन्तुक ने कहा - मुझे महामूर्ख कहकर सम्बोधित करते हैं।

मेरे से आप क्या सेवा चाहते हैं? तुर्गनैव ने पूछा तो वह बोला - आप मुझे छोटा-सा ऐसा मन्त्र बता दीजिए, जिससे मुझे लोग विद्वान समझें।

दो मात्रा का कौन-सा मन्त्र हो सकता है, यह सोचकर तुर्गनैव ने मन में हँसी दबाते हुए कहा - मन्त्र से विद्वान तो नहीं, महाविद्वान बन सकते हैं। उसने 'हाँ' कहा तो तुर्गनैव ने कहा - जब भी तुम किसी से बात करो, तब वह सामनेवाला एक और एक दो कहे तो तुम मन में कुछ शब्द कहकर प्रकट में एक और एक की जोड़ चार होती है, जोर देकर यह कहना। वह कुछ भी कहा करे, सुनना नहीं। तुम अपनी बात पर बस अड़े रहना।

आगन्तुक विद्या-मन्त्र, याद कर वैसा ही लोगों के सामने करने लगा। अब लोग गाली के रूप में उसे महाविद्वान कहने लगे। आजकल ऐसे महाविद्वान आपको सर्वत्र मिल जायेंगे।

शिक्षा - अल्प ज्ञानी होकर अपने को विद्वान बतलानेवाला हँसी और निन्दा का पात्र है; अत: गहन अध्ययन करने की आदत डालनी चाहिए। साथ ही जिस विषय की समझ न हो ,उसके विषय में अनावश्यक कुछ भी कहने से सदैव बचना चाहिए।

प्रिय-पाठक आपसे निवेदन है कि आपका सदस्यता शुल्क पूर्ण हो गया है और वर्तमान में कागज के दामों में वृद्धि होने के कारण पत्रिका का मासिक खर्च बढ़ गया है। अत: आपसे निवेदन है कि आप आजीवन पत्रिका शुल्क ₹ 1000 /- कृपया शीघ्र जमा करावे, और हमें सूचित करें, जिससे पत्रिका सुचारूरूप से आपको मिलती रहे।

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं -

1. बैंक द्वारा

NAME KAHAN	: SHRI ADINATH KUNDKUND DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	: PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	: RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	: 1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	: PUNB0001000
PAN NO.	: AABTA0995P

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/
3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST
Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

"जिस प्रकार–उसी प्रकार" में छिपा रहस्य

जिस प्रकार– जमाई के साथ उनके मित्रों की भी इज्जत की जाती है; अकेले मित्रों को वैसा आदर नहीं मिलता।

उसी प्रकार– निश्चय के साथ व्यवहार हो तो इज्जत पाता है; अकेला व्यवहार शोभा नहीं पाता।

जिस प्रकार– बादाम की गिरी के साथ छिलका हो तो सम्भाल कर रखा जाता है; गिरी के बिना छिलका फेंक दिया जाता है।

उसी प्रकार– निश्चय के साथ व्यवहार हो तो व्यवहार भी सम्भाला जाता है; निश्चय के बिना व्यवहार की कोई कीमत नहीं।

जिस प्रकार– मिट्टी सहित पानी को जब पानी के स्वभाव की अपेक्षा से देखा जाए तो पानी शुद्ध ही दिखता है, मलिन तत्त्व तो मिट्टी के कारण का भाग है। मिट्टी पानी नहीं है।

उसी प्रकार– ज्ञानी भेदज्ञान की शक्ति से, अपनी आत्मा को कर्मों से भिन्न और कर्मोदय जनित भावों से भिन्न ही देखता है, कर्म तो अजीव तत्त्व है, कर्मोदय जनित भाव तो आस्रव तत्त्व है, जीव तत्त्व नहीं है।

जिस प्रकार– कपड़े बदलने पर भी, शरीर नहीं बदलता, वही रहता है।

उसी प्रकार– शरीर बदलने पर भी आत्मा वही रहती है, ऐसा जानता है। मगर अज्ञानी डरता है कि शरीर के नष्ट होने से आत्मा नष्ट हो जायेगा।

जिस प्रकार– छोटी पीपर बाहर से काली, अन्दर से हरी है। उसमें चौसठ पुटी चरपराहट भरी हुई है। उसे पत्थर पर घोंटने से हरा रंग और चरपराहट पैदा होती है। वह चरपराहट पत्थर में से नहीं आयी।

उसी प्रकार– आत्मा जो बाहर से रागी–द्वेषी दिखाई देता है, अन्दर में वीतरागी एवं अनन्त आनन्द से भरा हुआ है, उसमें अन्दर जाने से वह प्रगट होती है।

जिस प्रकार– एक शीतल बर्फ की साढ़े तीन हाथ की शिला हो तो उसमें चारों ओर शीतलता–शीतलता भरी है। उसकी शीतलता बारदानें से भिन्न है।

उसी प्रकार– शरीर प्रमाण आत्मा हरतरफ से ज्ञान और आनन्द की शीतलता से भरा है। बाहर से राग–द्वेष को हटाकर देखे तो ज्ञान और आनन्द से भरा आत्मा अवश्य दिखाई देगा।

क्रमशः संकलन – प्रो० पुरुषोत्तमकुमार जैन, रुड़की

समाचार-दर्शन

गुरुदेवश्री का स्मृति दिवस

तीर्थधाम मंगलायतन : दिनांक 15 नवम्बर को सायंकाल 06.15 बजे से आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के स्मृति दिवस पर तीर्थधाम मंगलायतन में पूज्य गुरुदेवश्री के जीवन वृत्तान्त पर मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा गोष्ठी का आयोजन किया गया। जिसकी अध्यक्षता पण्डित अशोक लुहाड़िया ने की; विशिष्ट अतिथि श्री अनिल जैन, बुलन्दशहर; मुख्य अतिथि श्रीमती आशा जैन और संचालन मंगलार्थी दर्श जैन ने किया। मंगलार्थी अर्चित जैन द्वारा गुरुदेवश्री को समर्पित काव्यगीत प्रस्तुत किया गया। अनेक मंगलार्थियों द्वारा पूज्य गुरुदेवश्री से प्राप्त तत्त्वज्ञान को कार्यकारी व जीवन में प्रत्येक क्षण स्मरणीय बताया गया। इस अवसर पर पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री ने भी पूज्य गुरुदेवश्री को समर्पित अपना उद्‌बोधन दिया। इस अवसर पर श्री अशोक जैन बजाज, मंगलार्थी समकित जैन, श्रीमती रानी जैन, श्रीमती आलोकवर्धिनी जैन, श्रीमती अनुभूति जैन, आदि महानुभाव भी उपस्थित थे।

धवला खण्ड – 1 व 2 पर गोष्ठी सम्पन्न

मोह -सुप्त जीवों को जगाती है धवला।
ज्ञान-वैराग्य में सुमेल बिठाती है धवला।।

तीर्थधाम मंगलायतन द्वारा स्व. श्री पवनजी भाईसाहब की मनो-भावना से मार्गशीर्ष/अघहन कृष्णा पंचमी, वीरशासन संवत 2577 (5 दिसम्बर 2020) को प्रारम्भ हुए षट्‌खण्डागम धवलाजी टीका वाचना कार्यक्रम को अघहन कृष्णा पंचमी, वीर शासन सम्वत 2579 (13 नवम्बर, 2022) को 2 वर्ष पूर्ण हो गये हैं।

इस वाचना माला में, धवलाजी टीका की कुल 23 पुस्तकों में से 16 पुस्तक की वाचना के संकल्प- क्रम में 2 खंडों की टीका(कुल 7 पुस्तक) की वाचना का कार्य सुचारू रूप से पूर्ण हो गया है।

इस अवसर पर धवलाजी की 7 पुस्तकों के सार को हृदयंगम करने के प्रयोजन से वाचना काल में ही धवलासार गोष्ठी का आयोजन 13 नवम्बर, रविवार, दोपहर 1:30 से 3:30 बजे तक किया गया। इस गोष्ठी की अध्यक्षा-बालब्रह्मचारिणी कल्पना बहिन,जयपुर; मुख्य अतिथि - पंडित विपिन शास्त्री, नागपुर; विशिष्ट अतिथिगण- पंडित ऋषभ शास्त्री, उस्मानपुर, दिल्ली; पंडित ऋषभ शास्त्री, शंकरनगर, दिल्ली; पंडित अमित शास्त्री, मड़ावरा; श्री सुनील सर्राफ, सागर; श्री मनोज बंगेला, सागर; जिसकी संचालिका - श्रीमती आयुषी जैन,दिल्ली; मंगलाचरण -श्रीमती ज्योति जैन, उज्जैन ने किया। विभिन्न वक्ताओं के माध्यम से षट्‌खण्डागम लिखे जाने का सामान्य इतिहास विषय पर श्री प्रदीप जी जैन, हुबली ने अपना वक्तव्य दिया। इसी क्रम में पुस्तक 1-

डॉ.श्रीमती ममताजी जैन, उदयपुर; पुस्तक 2-डॉ.श्रीमती विमलाजी जैन, नागपुर; पुस्तक 3- श्रीमती शिल्पाजी जैन, मुंबई; पुस्तक 4-श्रीमती मुक्ताजी जैन, बैंगलुरु; पुस्तक 5-श्रीमती स्नेह लताजी जैन, इंदौर; पुस्तक 6- श्री अंतिम जी जैन, इंदौर; पुस्तक 7-श्रीमती राजुल जी जैन, बैंगलुरु ने दो वर्षों की वाचना का केंद्रीय भाव मात्र दो घण्टों के समय में रखा।

इस अवसर पर तीर्थधाम मंगलायतन से पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री एवं मंगलार्थी छात्र उपस्थित थे।

पंचास्तिकाय संग्रह ग्रन्थ पर अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी सम्पन्न

वीर कुन्दकुन्द कहान जैन यूथ एसोसिएशन, केन्या के द्वारा पंचास्तिकाय संग्रह ग्रन्थ पर अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन 13 नवम्बर 2022 को किया गया। जिसमें आठ देशों के लोगों ने भाग लिया। श्वेता जैन, सऊदी अरब; शचि जैन, यूएसए; राहुल जैन, न्यूजीलैण्ड; कोमल जैन, केन्या; डॉ. स्मिता, यू.के.; ख्याति जैन, यूएई; पिंकेश, केनेडा। भारत देश की ओर से तीर्थधाम मंगलायतन द्वारा संचालित भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन के मंगलार्थी अर्चित जैन, ललितपुर (कक्षा 12) ने वक्तव्य प्रस्तुत किया। एतदर्थ उन्हें बहुत-बहुत बधाई एवं शुभकामनाएं। इस गोष्ठी की अध्यक्षता डॉ. प्रवीण जैन, बांसवाड़ा ने की।

इसी प्रकार मंगलायतन के मंगलार्थी समय-समय पर देश-विदेश में तत्त्वज्ञान के प्रचार में सदैव संलग्न रहते हैं।

श्री कुन्दकुन्दाचार्य का पदारोहण दिवस

तीर्थधाम मंगलायतन : मार्गशीर्ष अष्टमी के दिन आचार्यश्री कुन्दकुन्द के 'आचार्य पदारोहण दिवस' पर तीर्थधाम मंगलायतन में कविवर पण्डित राजमल पवैया द्वारा रचित आचार्य कुन्दकुन्द पूजन बाहुबली जिनमन्दिर में सम्पन्न हुई। तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री द्वारा आचार्य कुन्दकुन्द से प्राप्त परमागम का सार विषय पर स्वाध्याय; दोपहर में धवला वाचना बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा; सायंकालीन जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् धार्मिक कक्षाओं का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पण्डित अशोक लुहाड़िया, श्री अनिल जैन, श्रीमती रानी जैन, पण्डित सुधीर शास्त्री आदि महानुभाव भी उपस्थित थे।

समाधि संगोष्ठी सम्पन्न

सागर (मकरोनिया) : डॉ. राकेश जैन, श्री अरुण मोदी एवं समस्त मुमुक्षु जगत के विद्वानों के सहयोग से ऑनलाइन समाधि संगोष्ठी का आयोजन दिनांक 9 नवम्बर से 13 नवम्बर 2022 तक किया गया। मकरोनिया मुमुक्षु समाज एवं सर्वोदय अहिंसा जयपुर का यह सतत् प्रयास मुमुक्षु समाज को वरदान सिद्ध होगा।

स्मृतिदिवस पर विधान सम्पन्न

तीर्थधाम मङ्गलायतन : यहाँ दिनांक 2 दिसम्बर 2022 को तीर्थधाम मङ्गलायतन के प्राणपुंज स्व. श्री पवनजी जैन के प्रथम स्मृतिदिवस पर 'सहज शान्ति विधान' का आयोजन किया गया। इस अवसर पर उनके द्वारा पूर्व में किये गये स्वाध्याय का प्रसारण भी सभा के समक्ष किया गया।

वैराग्य समाचार

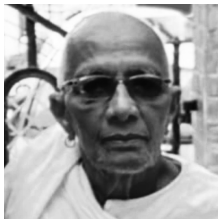

जैनदर्शन के मूर्धन्य विद्वान आदरणीय बालब्रह्मचारी संवेगी श्री केशरीचन्दजी (धवलजी) का छिन्दवाड़ा में शुद्धात्मा के भानपूर्वक शान्तपरिणामों से सहजता पूर्वक समाधि भावों से देह परिवर्तन हो गया।

आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के पुण्य प्रभावनायोग में आपने सम्पूर्ण जीवन तत्त्वज्ञान को समर्पित किया। आप स्वभाव से अत्यन्त सरल, जिनशासक प्रभावक एवं आपकी समन्वयवाली शैली से सभी प्रभावित थे और देश के सभी विद्यालयों में अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से; शारीरिक स्वास्थ्य प्रतिकूल होने पर भी बड़ी निष्ठा से आप बच्चों को पढ़ाने हेतु जाते थे। तीर्थधाम मंगलायतन में भी आप कई बार मंगलार्थी छात्रों को पढ़ाने हेतु पधारे।

वैसे तो पूरे देश में ही उन्होंने जिन शासन की प्रभावना की थी, पर छिंदवाड़ा समाज के साधर्मियों के प्रति अपार स्नेह आपका स्पष्ट झलक रहा था, छिन्दवाड़ा के साधर्मियों ने खूब सेवा की, एक विद्वान की सेवा करना वो भी घोर अनुशासन प्रिय विद्वान की, जिसे आम लोग (नखरे) बोलते हैं, सच में प्रशंसनीय काम है।

जब आपने अपने धार्मिक जीवन की शुरुआत की थी तभी गुरु ने ५ वर्ष के लिए नमक छुड़वा दिया था। आप श्वेताम्बर साधुओं के पास पढ़े परन्तु कुछ प्रश्नों के उत्तर आपको नहीं मिल रहे थे। अतः दिगंबर शास्त्रों का अध्ययन किया और बाद का जीवन दिगंबर जैन समाज के बीच बिताया। उदासीन आश्रम में आप रहे और आपने जैन समाज के साथ मुमुक्षु समाज व तारण समाज को विशेष लाभ दिया था। आप सत्पुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी से भी मिले थे और अनेक स्थानों पर स्वाध्याय करने भी गए थे तथा आपने उस समय समाज में चलनेवाले विवादित मामलों को भी अपनी सूझ-बूझ से खूब निपटाया है। आपने जैन साधुओं को भी पढ़ाया है।

पूर्णता के लक्ष्य के लिए एक साधक की भाँति जिनशासन की प्रभावना में उन्होंने जीवन जिया और वे अपने पूर्ण लक्ष्य को प्राप्त हों, इस कामना के साथ तीर्थधाम मंगलायतन परिवार उनके प्रति विनम्र श्रद्धांजली अर्पित करता है।

मौ (भिण्ड) : श्री महेन्द्रकुमार जैन सिंघई का शान्तपरिणामोंसहित देहपरिवर्तन हो गया है। आप पण्डित शुद्धात्मप्रकाश जैन ग्वालियर के पिताश्री थे।

दिवंगत आत्मा शीघ्र ही मोक्षमार्ग प्रशस्त कर अभ्युदय को प्राप्त हो - ऐसी भावना मङ्गलायतन परिवार व्यक्त करता है।

षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित

तीर्थधाम मङ्गलायतन में प्रथम बार कीर्तिमान रचते हुए प्रथम श्रुतस्कन्ध **'षट्खण्डागम धवला टीका सहित'** वाचना का कार्यक्रम, मार्गशीर्ष पंचमी, शनिवार 5 दिसम्बर 2020 से करणानुयोग की विशेषज्ञ बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन द्वारा अनवरत प्रारम्भ है। जिसकी प्रथम पुस्तक की वाचना का समापन 31 मार्च 2021; द्वितीय पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 01 अप्रेल से, समापन 08 जुलाई 2021; तृतीय पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 09 जुलाई 2021 तथा समापन 24 अक्टूबर 2021; चतुर्थ पुस्तक की वाचना का प्रारम्भ 25 अक्टूबर 2021 से 27 फरवरी 2022; पंचम पुस्तक की वांचना का 28 फरवरी 2022 से 24 अप्रेल 2022; छठवीं पुस्तक की वाचना का 25 अप्रेल 2022 से 02 अगस्त 2022; सातवीं पुस्तक की वाचना 03 अगस्त 2022 से 12 नवम्बर 2022 तक भक्तिभावपूर्वक सम्पन्न हुई।

विद्वान बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर तथा सहयोगी भाई-बहिनों एवं मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त हुआ।

सम्पूर्ण 16 पुस्तकों की वाचना निरन्तर तीर्थधाम मंगलायतन से प्रवाहित होती रहे, ऐसी भावना आदरणीय पवनजी जैन की थी। जिसमें क्रमश:...

आठवीं पुस्तक की वाचना 14 नवम्बर 2022 से प्रारम्भ

विद्वत् समागम - बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई-बहिनों तथा मंगलायतन परिवार का भी लाभ प्राप्त होता है।

दोपहर 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन)	**षट्खण्डागम (धवलाजी)**	
रात्रि	07.30 से 08.30 बजे तक	मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय
	08.30 से 09.15 बजे तक	**समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्च्यारण सहित सामान्यार्थ**

नोट—इस कार्यक्रम में आप ZOOM ID-9121984198,
Password - mang4321 के माध्यम से भी शामिल हो सकते हैं।

हार्दिक आमन्त्रण

विश्व की अद्वितीय रचना ढाईद्वीप जिनायतन इन्दौर में **श्री आदिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव 20 जनवरी से 26 जनवरी 2023** तक अनेकों विशेषताओं सहित सम्पन्न होगा।

मङ्गल वात्सल्य-निधि

सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाइल ..... ई-मेल .....

मैं **'मङ्गल वात्सल्य-निधि'** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं ..... राशि जमा करवाऊँगा / दूँगा।

हस्ताक्षर

- चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय -

ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव,
तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।
इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,
द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः॥

अर्थात् गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब मैं लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा, तब दान दूँगा; बल्कि जितना धन हमारे पास है, उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए। - आचार्य पद्मनन्दि : पद्मनन्दि पञ्चविंशतिका, श्लोक 230

यह राशि आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं -

1. बैंक द्वारा

NAME	:	SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST, ALIGARH
BANK NAME	:	PUNJAB NATIONAL BANK
BRANCH	:	RAILWAY ROAD, ALIGARH
A/C. NO.	:	1825000100065332
RTGS/NEFTS IFS CODE	:	PUNB0001000
PAN NO.	:	AABTA0995P

2. Online : http://www.mangalayatan.com/online-donation/
3. ECS : Auto Debit Form के माध्यम से।

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST
Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

जनवरी 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

2 जनवरी – पौष शुक्ल 11
श्री शान्तिनाथ ज्ञान कल्याणक
5 जनवरी – पौष शुक्ल 14 **चतुर्दशी**
6 जनवरी – पौष शुक्ल पूर्णिमा
श्री सुमतिनाथ ज्ञान कल्याणक
श्री धर्मनाथ ज्ञान कल्याणक
7 जनवरी – माघ कृष्ण 1
श्री पुष्पदन्त भगवान तप कल्याणक
13 जनवरी – माघ कृष्ण 6
श्री पद्मप्रभ भगवान गर्भ कल्याणक
15 जनवरी – माघ कृष्ण 8 **अष्टमी**
19 जनवरी – माघ कृष्ण 12
श्री शीतलनाथ जन्म-तप कल्याणक
20 जनवरी – माघ कृष्ण 14 **चतुर्दशी**
21 जनवरी – माघ कृष्ण अमावस्या
श्री श्रेयांसनाथ ज्ञान कल्याणक
23 जनवरी – माघ शुक्ल 2
श्री वासुपूज्य ज्ञान कल्याणक
25 जनवरी – माघ शुक्ल 4
श्री विमलनाथ जन्त-तप कल्याणक
29 जनवरी – माघ शुक्ल 8 **अष्टमी**

सम्माननीय पाठक कृपया ध्यान देवें

आपको यदि तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्रकाशित मासिक पत्रिका **मङ्गलायतन** यदि नहीं मिल रही / पता बदलना / बन्द करना हो तो आप हमें निम्न फार्म भरकर कृपया अवश्य भेजें।

नाम / पत्रिका ग्राहक संख्या .....

पता .....

.....

.....

मोबा. ..... ई-मेल .....

कृपया निम्न पते पर भेजने का कष्ट करे अथवा whatsapp भी भेज सकते हैं -

सम्पादक, मङ्गलायतन मासिक पत्रिका
तीर्थधाम मङ्गलायतन, आगरा-अलीगढ़ राजमार्ग
सासनी-204216 (हाथरस) उत्तरप्रदेश
whatsapp : 7581060200, 9756633800
Email : info@mangalayatan.com

स्मृतिदिवस की झलकियाँ

Regn. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23

मुनिदशा के बिना मुक्ति नहीं

मुनिराज, निर्मल विज्ञानघन में निमग्न हैं। अहा! कैसी भाषा का प्रयोग किया है। साधुपना कोई अलग ही है भाई! विज्ञान का घन ऐसा जो निज भगवान आत्मा, उसमें वे अन्तर्निमग्न हैं। निमग्नपना, वह पर्याय है, परन्तु वह पर्याय त्रैकालिक एकाकार विज्ञानघनस्वभाव में निमग्न है, डूबी हुई है। अहा! इस **दशा के बिना मुक्ति नहीं** है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और स्वरूपाचरण चतुर्थ गुणस्थान में होते हैं, परन्तु इतने से ही सम्पूर्ण मुक्ति नहीं होती। सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञानपूर्वक प्रचुर स्वसम्वेदनस्वरूप निर्ग्रन्थ चारित्रदशा आये, उससे मुक्तिदशा प्राप्त होती है। बाह्य में वेष धारण कर ले, नग्नता ले ले और पञ्च महाव्रतादि का पालन करे, वह कोई मुनिदशा नहीं है।

(- वचनामृत प्रवचन, पृष्ठ 184)

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलायतन।

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 (उ.प्र.)

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust

Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22

info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com

मङ्गलायतन में गूँजेगा, गरजेगा जिनशासन का गौरव

श्री आदिनाथ कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ द्वारा निर्मित

तीर्थधाम मङ्गलायतन में

श्री महावीरस्वामी दिगम्बर जिनबिम्ब पंच कल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव के गौरवशाली 20 वर्ष पूर्ण होने पर

आदि-वीर मंगलोत्सव

(गुरुवार, 2 फरवरी से सोमवार, 6 फरवरी 2023 तक)

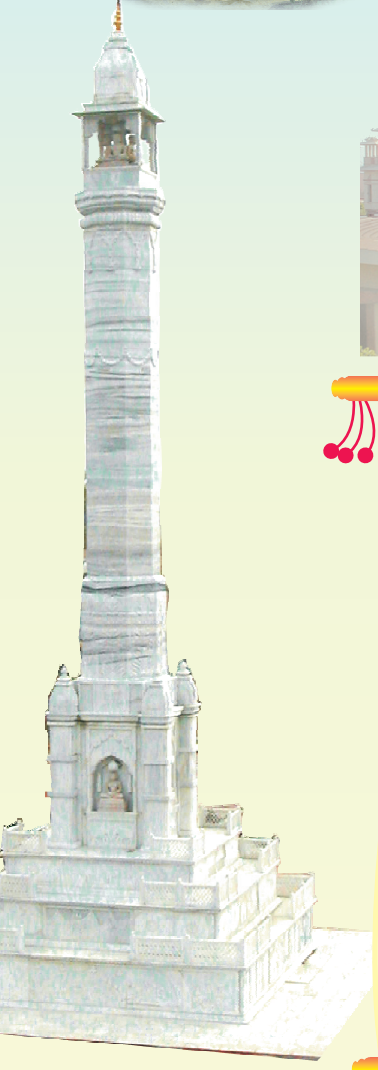

अग्रिम आमन्त्रणपत्रिका

सत्धर्म प्रेमी, बन्धुवर!

सादर जय जिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार!

जिनशासन के प्रभावनायोग से ***तीर्थधाम मङ्गलायतन***, वीतरागी भगवन्तों, आचार्यों, ज्ञानी धर्मात्माओं एवं पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सदुपदेशों को निरन्तर देश-विदेश में प्रचारित कर रहा है।

तीर्थधाम मङ्गलायतन को प्रादुर्भाव हुए 20 वर्ष हो रहे, इस महान संकुल का **20वाँ वार्षिक महा-महोत्सव** अत्यन्त हर्षोल्लासपूर्वक **गुरुवार, 02 फरवरी से सोमवार, 06 फरवरी 2023** तक मनाया जा रहा है।

आप और हम—सभी मङ्गलार्थी हैं। अत: ***तीर्थधाम मङ्गलायतन*** के अभिन्न अङ्ग हैं। दो दशकों से सतत तीर्थङ्कर-सद्धर्म प्रभावना में संलग्न इस जिनायतन के प्रति यह हम सभी का उत्तरदायित्व है कि हम वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु के गुण-स्तवन में आकण्ठ डूबकर पूरे उत्साह एवं वात्सल्य से इस प्राणोद्भव-महोत्सव की आनन्द-वर्षा में हिल-मिल स्नान करें।

इस अवसर पर ज्ञानकणिका बिखेरने **पण्डित विमलदादा झांझरी, उज्जैन; बालब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़; बालब्रह्मचारी सुमतप्रकाश जैन, खनियांधाना; पण्डित राजेन्द्र जैन, जबलपुर; पण्डित जे.पी. दोशी, मुम्बई; पण्डित रजनीभाई दोशी, हिम्मतनगर; पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलियां; डॉ. संजीव गोधा, जयपुर; डॉ. राकेश जैन, नागपुर; डॉ. योगेश जैन, अलीगंज; पण्डित सोनू जैन, दिल्ली; डॉ. मनीष जैन, मेरठ; पण्डित आलोक जैन, कारंजा; डॉ. विवेक जैन, छिन्दवाड़ा; पण्डित ऋषभ शास्त्री, छिन्दवाड़ा; पण्डित नगेश जैन, पिड़ावा; बा.ब्र. कल्पनाबेन, जयपुर; विदुषी राजकुमारीजी, दिल्ली; डॉ. ममता जैन, उदयपुर; स्थानीय विद्वान पण्डित अशोक लुहाड़िया, पण्डित सचिन जैन, पण्डित सुधीर शास्त्री, डॉ. सचिन्द्र शास्त्री, मङ्गलार्थी समकित शास्त्री, *तीर्थधाम मङ्गलायतन*** आदि का लाभ प्राप्त होगा।

आप सब इस महोत्सव में, आबाल-गोपालसहित सादर आमन्त्रित हैं। निश्चित ही इस पञ्च दिवसीय अनुष्ठान में पञ्चम परमपारिणामिकभाव की महिमा जागृत होकर, मोक्षमार्ग प्रशस्त होगा। यह सम्पूर्ण कार्यक्रम पञ्च परमागम को आधार बनाकर सम्पन्न होगा।

सांस्कृतिक कार्यक्रम

2 फरवरी – राजसभा
3 फरवरी – इन्द्रसभा
4 फरवरी – **वज्रबाहु का वैराग्य** (नाटक) अनन्तमति बालिका मण्डल जबेरा
5 फरवरी – मङ्गलार्थी छात्रों द्वारा
6 फरवरी – समापन

विशिष्ट आकर्षण

- गुरुदेवश्री के भवतापहारी सी.डी. प्रवचन
- आत्मार्थी विद्वानों में व्याख्यान एवं कक्षाएँ
- श्री पंच परमागम विधान (प्रत्येक दिन)
- पंच परमागम पर संगोष्ठी
- पञ्च कल्याणक विशेष प्रस्तुति
- इन्द्रसभा - राजसभा
- वैराग्य नाटिका (अनन्तमति बालिका मण्डल, जबेरा)

समारोह के मुख्य आकर्षण

प्रौढ़ कक्षा (पण्डित सचिन जैन) – प्रासंगिक विविध विषय

2 फरवरी –	गर्भ कल्याणक समयसार विधान	गोष्ठी
3 फरवरी –	जन्म कल्याणक अष्टपाहुड़ विधान	गोष्ठी
4 फरवरी –	तप कल्याणक नियमसार विधान	गोष्ठी
5 फरवरी –	ज्ञान कल्याणक प्रवचनसार विधान	गोष्ठी
6 फरवरी –	मोक्ष कल्याणक पंच कल्याणक विधान	गोष्ठी

दोपहरकालीन सत्र में विविध विद्वानों के माध्यम से पंच परमागम के गम्भीर विषयों पर गोष्ठी होगी।

दैनिक गुञ्जार

प्रात:
05:45 से 06:30 प्रौढ़ कक्षा
07:00 से 08:40 पूजन विधान
09:30 से 10:10 पूज्य गुरुदेवश्री का सी.डी. प्रवचन
10:15 से 11:00 स्वाध्याय
11:00 से 11:45 स्वाध्याय

दोपहर
01:30 से 02:30 वाचना-षट्खण्डागमजी
02:40 से 04:15 गोष्ठी

शाम
05:40 से 06:15 धार्मिक कक्षा
06:20 से 07:00 जिनेन्द्र भक्ति
07:00 से 07:45 बालकक्षा
07:05 से 07:40 स्वाध्याय
07:40 से 08:20 स्वाध्याय
08:25 से 09:30 सांस्कृतिक कार्यक्रम

गौरवशाली पात्र

विधानकर्ता – श्री विजयकुमारजी जैन, हाथरस/मुम्बई
श्री ऋषभ जैनबहादुरजी जैन परिवार, कानपुर
श्री मनोज धन्यकुमारजी परिवार, कारंजा
पण्डित जे.पी. दोशी श्रीमती ऊषा जैन परिवार, मुम्बई

उद्घाटनकर्ता – श्री महेन्द्रजी गंगवाल परिवार, जयपुर

ध्वजारोहणकर्ता – श्री संजयजी दीवान परिवार, सूरत

मुख्य अतिथि – श्री सुनीलजी गाँधी, पुणे

विशिष्ट अतिथि – श्री पी. के. जैन, रुड़की; श्री दिलीपभाई शाह, मुम्बई; श्री जबेरचन्दजी हथाया प्रकाशजी, मुम्बई; श्री इन्द्रकुमारजी गंगवाल, इन्दौर; श्री सुनीलजी सर्राफ, सागर;

मङ्गलकलश – श्री सन्दीपजी जैन परिवार, मेरठ

विदेशों से — डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका; श्रीमती ज्योत्स्नाबेन, अमेरिका; श्री विजेनभाई शीतल शाह, लन्दन; श्री मनुभाई महेन्द्रभाई शाह, लन्दन; श्री प्रफुल्लभाई, नैरोबी; श्री सुधीरभाई तलसानिया, केनेडा

— निवेदक —

अजितप्रसाद जैन, अध्यक्ष / स्वप्निल जैन, महासचिव एवं समस्त ट्रस्टीगण, श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, अलीगढ़ (उत्तरप्रदेश)

सम्पर्कसूत्र एवं कार्यक्रम स्थल

सुधीर जैन शास्त्री, तीर्थधाम मङ्गलायतन, अलीगढ़-आगरा राजमार्ग, सासनी, हाथरस (उत्तरप्रदेश)

फोन : 9756633800, 9997996346 (ऑफिस) / info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com